ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 94-96**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-III, Issues-37, YEAR- July-Sept. 2025

दीनदयाल उपाध्याय के अभिन्न मानवतावाद का विकास

ब्रह्मदत्त सिंह, 2.डॉ0 राजबहादुर कुशवाहा

शोध अध्येता– राजनीति विज्ञान, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी, 2. राजनीति विज्ञान विभाग, अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज, अतर्रा बांदा (उ0प्र0) भारत

Received-26.08.2025, Revised-04.09.2025, Accepted-10.09.2025 **E-mail : vishnucktd@gmail.com**

सारांशः ***भारत शब्द एक राष्ट्र के रूप में भावनाओं का प्रतीक नहीं है, लेकिन भारत माता वही करती है और राष्ट्र की भावनाओं और राष्ट्र के प्रति प्रेम को जगाती है। यह जादुई शब्द भूमि और उसके निवासियों के बीच एक संबंध बनाता है। जन्म–भूमि और मातृभूमि, ये शब्द और विचार मूल रूप से भारत में उत्पन्न हुए हैं। यहाँ के लोग अपनी भूमि को अपनी माँ के रूप में दर्शाते हैं, एक जीवित इकाई न कि केवल भूमि का एक टुकड़ा। यह उनकी भूमि के प्रति उनके प्रेम को दर्शाता है। ऐसे कई सामाजिक विचारक हैं जो पंडित जी की तरह ही अपनी मातृभूमि के प्रति समान राय और प्रेम रखते हैं, और ये हैं श्री अरबिंदो, बंकिम चंद्र चटर्जी और कई अन्य। देशभक्ति का हिंदू विचार मातृभूमि की अवधारणा पर आधारित है। वंदे मातरम्, बंकिम चंद्र का एक देशभक्ति गीत, उनकी माँ के बारे में उनकी दृष्टि है, गीत का अर्थ है माँ को सलाम। मातृभूमि की अवधारणा राष्ट्रवाद का आधार है जिसे एम.एस. गोलवलकर ने अपने अध्ययन – नॉट सोशलिज्म बट हिंदू राष्ट्र में वर्ष 1964 में किया था।***

राष्ट्र की अवधारणा पंडित जी के समग्र मानवतावाद के दर्शन में एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखती है। एक राष्ट्र बनाने के लिए, भूमि और लोगों की आवश्यकता होती है, लेकिन एक राष्ट्र इन दोनों से कहीं अधिक है, इसमें अपने देश के लिए भावनाएँ और प्रेम शामिल है। एक राष्ट्र एक व्यापक और सभी शामिल अवधारणा और इकाई है। राष्ट्र निर्माण के संबंध में उनके विचार हैं, "जब व्यक्तियों का एक समूह एक लक्ष्य, एक आदर्श, एक मिशन के साथ रहता है, और एक विशेष भूखंड को मातृभूमि के रूप में देखता है, तो समूह एक राष्ट्र का गठन करता है। यदि दो में से कोई एक – एक आदर्श और एक मातृभूमि – नहीं है, तो कोई राष्ट्र नहीं है पंडित जी भूमि और लोगों के बीच के संबंध को माँ और उसके बच्चों के बीच के संबंध के रूप में लेते हैं। इस संबंध के आधार पर एक राष्ट्र का गठन होता है, क्योंकि यह मौलिक संबंध है, क्योंकि कई अन्य संबंध हो सकते हैं जैसे कि उपनिवेशवादियों और शोषकों का उस भूमि के साथ संबंध जिसका वे शोषण कर रहे हैं। उनके पास उस भूमि के लिए कोई भावना नहीं है वे उस भूमि का शोषण केवल अपने स्वार्थी उद्देश्य को पूरा करने के लिए उसकी संपत्ति प्राप्त करने के लिए करते हैं। मातृभूमि की अवधारणा देशभक्ति के हिंदू आदर्श में गहराई से निहित है।

कुंजीभूत शब्द– **मानवतावाद का विकास, जन्म–भूमि, मातृभूमि, राष्ट्र का गठन, मौलिक संबंध, उपनिवेशवाद, हिंदू आदर्श, स्वार्थी ।**

प्रस्तावना – एक राष्ट्र बनाने के लिए भूमि और लोगों की आवश्यकता होती है, लेकिन एक राष्ट्र इन दोनों से कहीं अधिक है, इसमें अपने देश के लिए भावनाएँ और प्रेम शामिल है। एक राष्ट्र एक व्यापक और सभी शामिल अवधारणा और इकाई है। राष्ट्र निर्माण के संबंध में उनके विचार हैं, "जब व्यक्तियों का एक समूह एक लक्ष्य, एक आदर्श, एक मिशन के साथ रहता है, और एक विशेष भूखंड को मातृभूमि के रूप में देखता है, तो समूह एक राष्ट्र का गठन करता है। यदि दो में से कोई एक – एक आदर्श और एक मातृभूमि – नहीं है, तो कोई राष्ट्र नहीं है।

पंडित जी का मानना है कि राष्ट्र को मजबूत, सामाजिक और आर्थिक रूप से स्थिर बनाने के लिए उन सिद्धांतों का पालन करना महत्वपूर्ण है जिनमें राष्ट्र की एकीकृत चेतना यानी चिति शामिल है। उनके अनुसार चिति राष्ट्र की आत्मा है जो राष्ट्र को शक्ति और शक्ति प्रदान करती है।

पंडित जी के विचारों के अनुसार देश की समृद्ध संस्कृति और विरासत भारत की पहचान के प्रतीक हैं और उन्हें संरक्षित और मजबूत करना चाहिए। पश्चिमी संस्कृति और जीवन शैली के प्रति आकर्षण गहरी जड़ें जमा चुकी भारतीय संस्कृति को नुकसान पहुँचा रहा है, लेकिन इसे प्राचीन संस्कृति में दृढ़ विश्वास के साथ पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। महान विरासत को संरक्षित करने के लिए विभिन्न आंदोलन शुरू किए गए जैसे कि आर्यसमाज और रामकृष्ण मिशन कुछ विचारकों जैसे तिलक, लाला लाजपत राय, बिपिन चंद्र पाल और अरबिंदो द्वारा। पंडित जी को समृद्ध भारतीय संस्कृति के प्रवर्तक के रूप में जाना जाता है और यह विचार स्व–प्रेरित है। वह चाहते थे कि हर कोई महान विरासत और संस्कृति का सम्मान करे और उसे अपनाए। वह खुले विचारों वाले होने और नए विचारों का सम्मान करने के कभी खिलाफ नहीं थे, क्योंकि वे ताजी हवा का काम करते हैं, लेकिन उन्होंने केवल उन विचारों को अपनाने का सुझाव दिया जो भारत की संस्कृति के नैतिकता और सिद्धांतों के अनुरूप हैं और उनके पक्ष में हैं और यह स्वीकार्य और प्रासंगिक लगता है।

दीनदयाल पश्चिमी विचारों और उनकी स्वीकृति के खिलाफ नहीं थे, लेकिन उनका मानना था कि भारत की संस्कृति और विचार ज्ञान और नवाचारों के संदर्भ में कम नहीं हैं और वह इस तथ्य को जानते थे कि भारत अपने ज्ञान के विशेष विचारों के कारण दुनिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है जो कोई अन्य संस्कृति प्रदान नहीं कर सकती है।

यह माना जाता है कि राष्ट्र की उनकी अवधारणा भू–सांस्कृतिक थी, क्योंकि उनका मानना था कि जिस स्थान पर लोग रहते हैं वह सिर्फ जमीन का एक टुकड़ा नहीं है, बल्कि उसे उनकी मातृभूमि के रूप में माना जाना चाहिए। उन्होंने लोगों से अपनी मातृभूमि की निस्वार्थ सेवा करने का आग्रह किया, पूरी श्रद्धा और निष्ठा के साथ। वह चाहते थे कि राष्ट्रवाद की भावना समाज के हृदय में इस तरह गूंजे जैसे प्रेम और श्रद्धा एक बच्चे के हृदय में अपनी माँ के लिए गूंजती है। उन्होंने राष्ट्र के लिए संस्कृति के महत्व पर भी ध्यान आकर्षित किया। उन्होंने कहा कि एक राष्ट्र के रूप में भारत की जड़ें प्राचीन भारतीय परंपराओं और संस्कृति में हैं जो हिंदू धर्म में निहित हैं। वह इस तथ्य से अवगत थे कि विभिन्न जातियों और संप्रदायों के कई अलग–अलग लोग भारत आए थे, कुछ सिर्फ यात्रा करने के लिए और कुछ भारत को अपने स्वार्थी उद्देश्यों के लिए अपनी कॉलोनी बनाने के लिए। भारत में उनकी यात्रा और प्रवास के कारण, उनकी संस्कृति प्राचीन भारतीय संस्कृति के साथ मिल गई, लेकिन भारत ने कभी भी अपनी बुनियादी नैतिकता

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-III, Issues-37, YEAR- July-Sept. 2025

और मौलिकता नहीं खोई थी। भारत में, विविधता में एकता है। विभिन्न संप्रदायों, धर्मों, संस्कृतियों, भाषाओं और विश्वासों के लोग एक साथ रहते हैं, इसलिए एक संस्कृति और एक राष्ट्र का विचार भारत में लागू नहीं किया जा सकता है। उन्होंने यहां रहने वाले विभिन्न समुदायों द्वारा हिंदू मुख्यधारा की संस्कृति की स्वीकृति पर जोर दिया।

उन्होंने कहा कि संप्रभुता केवल धर्म में निवास करती है और उनके विचार बहुलवादियों और अद्वैतवादियों जैसे नहीं थे। उनके अनुसार, संप्रभुता समाज के सभी संस्थानों के साथ निवास करती है, लेकिन अन्य लोगों का मानना है कि संप्रभुता केवल राज्य के साथ निहित है। पंडित जी के अनुसार, विधायिका, न्यायपालिका और कार्यपालिका को धर्म के नियमों के अनुसार काम करना होगा और उन्हें धर्म का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। उन्होंने कहा कि भगवान धर्म के अनुसार कार्य करते हैं। धर्म–राज्य की उनकी अवधारणा केवल एक सैद्धांतिक अवधारणा नहीं है, इसकी व्यावहारिक उपयोगिता भी है, क्योंकि राज्य सभी को राज्य से किसी भी दबाव और भेदभाव के बिना किसी भी धर्म का पालन करने की स्वतंत्रता प्रदान करता है। धर्म–राज्य की उनकी अवधारणा संघीय राज्य को स्वीकार नहीं करती है। उनका दृढ़ मत था कि संविधान संघीय के बजाय एकात्मक होना चाहिए।

एकात्मक राज्य की उनकी अवधारणा ने पंचायत के सबसे निचले स्तर तक शक्ति के हस्तांतरण की अनुमति दी। उन्होंने हमेशा शक्ति के उपयुक्त हस्तांतरण की वकालत की, लेकिन सवाल उठता है कि यह उपयुक्त शक्ति क्या है और इन उपयुक्त शक्तियों को निचले स्तरों को कैसे प्रदान किया जाए, जिसे पंडित जी ने परिभाषित नहीं किया था। वह अधिकार के हस्तांतरण के पक्ष में थे, लेकिन वह जानते थे कि एकात्मक राज्य शक्ति का केंद्र है। उन्होंने परिवार और राज्य के बीच समानताएं लिखीं और बताया कि कैसे शक्ति परिवार के मुखिया के पास होती है, लेकिन सभी सदस्य चुनने के लिए स्वतंत्र होते हैं। राजनीति में अलग–अलग सिद्धांतों और विचारधाराओं वाली अलग–अलग राजनीतिक पार्टियां होती हैं, जो तदनुसार काम करती हैं। अधिकांश मुद्दों पर उनकी अलग–अलग राय होती है और दुर्लभ मामलों में वे एक–दूसरे से सहमत होते हैं। ये पार्टियां केंद्र और प्रांतों में सरकार बनाती हैं और यदि केंद्र और राज्यों में अलग–अलग पार्टियों की सरकारें हैं, तो सहयोग करना या काम करना आसान नहीं है। राज्यों की सरकार को सत्ता से बाहर करने के लिए अनुच्छेद 356 का आह्वान हमेशा भारत में एक विवादास्पद मुद्दा रहा है। पंडित जी भी तत्कालीन केंद्र सरकार के तर्कहीन और गैर–जिम्मेदाराना व्यवहार से निराश थे। उन्होंने दृढ़ता से महसूस किया कि यदि सभी शक्तियां केंद्र के पास होंगी तो अपनी व्यक्तिगत रुचियों के लिए शक्तियों के दुरुपयोग की संभावना है और वे निचले स्तर के किसी भी व्यक्ति की बात नहीं सुनेंगे। लेकिन यहां उनके विचारों में एक विरोधाभास प्रतीत होता है, क्योंकि एक तरफ वह हमेशा राष्ट्र की एकता के लिए एकात्मक राज्य चाहते थे और उसका समर्थन करते थे, लेकिन दूसरी तरफ वह केंद्र को सभी शक्तियां देने के खिलाफ हैं, क्योंकि उन्हें शक्तियों के दुरुपयोग का डर है।

धर्म राज्य की उनकी अवधारणा किसी न किसी तरह गांधीजी की राम राज्य अवधारणा और एम.एन. रॉय के संगठित लोकतंत्र से अलग है। पंडित जी एक मजबूत राज्य चाहते थे और उन पर विश्वास करते थे जबकि गांधीजी एक प्रगतिशील अराजकता चाहते थे। उन्होंने धर्म पर आधारित लोकतंत्र का समर्थन किया, लेकिन एम.एन. रॉय का संगठित लोकतंत्र लोगों की समिति को शक्ति के प्रसार पर आधारित था। दीनदयाल ने लोकतंत्र में राजनीतिक दलों की भूमिका को समझा, लेकिन एम.एन. रॉय राजनीतिक दलों की भागीदारी के सख्त खिलाफ थे, वह पार्टी–रहित लोकतंत्र चाहते थे।

दीनदयाल के अनुसार, आर्थिक संकट का मुख्य कारण मनोवैज्ञानिक गड़बड़ी और मानवीय मूल्यों का पतन था, जबकि मौजूदा आर्थिक सिद्धांतों से बाहर निकल रहे थे। वह पूंजीवादी और साम्यवादी दोनों प्रणालियों के खिलाफ थे क्योंकि उन्हें लगा कि ये दोनों प्रणालियाँ समग्र मानव, उसकी सच्ची और पूर्ण व्यक्तित्व और जीवन के उद्देश्यों को ध्यान में रखने में अत्यधिक अक्षम हैं। राधाकृष्णन, Aurobindo, टैगोर, गांधी आदि जैसे कई समकालीन विचारकों ने साम्यवादी और पूंजीवादी व्यवस्था के लिए समान विचार साझा किए। दीनदयाल की आर्थिक सोच प्रक्रिया में, मनुष्य हमेशा एक प्राथमिकता है और केंद्र में है, क्योंकि उनकी राय में मनुष्य ईश्वर की सर्वोच्च रचना है। इसलिए, मनुष्य का विकास, वृद्धि और कल्याण अत्यंत चिंता का विषय है। समग्र मानव की खुशी बहुत महत्वपूर्ण है। इस संदर्भ में वह हमें मनुष्य से संबंधित अवधारणा के युग–पुराने इतिहास की याद दिलाते हैं जिसमें मनुष्य को केवल भौतिक इच्छाओं और प्रयासों के गोदाम के रूप में ही नहीं बल्कि एक आध्यात्मिक इकाई के रूप में भी वर्णित किया गया था। भौतिकवादी और गैर–भौतिकवादी प्रणालियों में समन्वय विकसित किया जाना चाहिए। पंडित जी ने मनुष्यों के समग्र विकास पर जोर दिया और अर्थ, काम, धर्म और मोक्ष की एकीकृत और उचित पूर्ति की आवश्यकता पर जोर दिया।

वह उस आर्थिक प्रणाली के पक्ष में थे जो मानव जीवन की न्यूनतम बुनियादी जरूरतों को पूरा करेगी। यदि सरकार मानव प्राणियों की बुनियादी जरूरतों को पूरा करने में सक्षम है, तभी यह धर्म का शासन है, अन्यथा यह अधर्म है। उनकी राय में, राजनीतिक लोकतंत्र के साथ–साथ आर्थिक लोकतंत्र भी समान रूप से महत्वपूर्ण और आवश्यक है। उन्होंने सभी के लिए काम करने के विचार का समर्थन किया। उनके अनुसार, हर किसी को काम मिलना चाहिए न कि केवल आजीविका कमाने के लिए बल्कि केवल उसकी क्षमता, पसंद और प्राथमिकताओं के आधार पर। उन्होंने श्रमिकों के लिए न्यूनतम मजदूरी और उनके लिए सामाजिक सुरक्षा की मांग की। हैरोल्ड जे. लास्की के भी कामकाजी वर्ग के अधिकारों जैसे काम का अधिकार और पर्याप्त मजदूरी के संबंध में समान विचार थे। दीनदयाल के लिए, अधिकार और कर्तव्य समान रूप से महत्वपूर्ण और अनिवार्य हैं।

निष्कर्ष – प. दीनदयाल जी ने हमेशा स्वदेशी का समर्थन किया और भारत के विकास के लिए विकेंद्रीकरण में विश्वास किया। उनके विकेंद्रीकरण की अवधारणा उत्पादन के मुख्य इकाई के रूप में उनके परिवार के साथ–साथ व्यक्ति पर आधारित थी। उनके विचार मार्क्सवादियों और गांधीवादियों से अलग थे, क्योंकि उनकी अवधारणाओं ने पंचायत और सहकारी समितियों को महत्व दिया। पंडित जी कृषि और उद्योग का समान विकास चाहते थे। 18वीं सदी के कई फ्रांसीसी राजनीतिक अर्थशास्त्रियों ने कृषि के विकास पर जोर दिया। पहले भारत एक कृषि आधारित देश था और भारत को अपनी कृषि आवश्यकताओं के लिए आत्मनिर्भर होना चाहिए। कृषि विकास देश के औद्योगिक विकास को बढ़ावा दे सकता है। दोनों क्षेत्रों को साथ–साथ विकसित किया जाना चाहिए और दोनों क्षेत्रों के समान विकास की यह अवधारणा देश के लिए महत्वपूर्ण है।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-III, Issues-37, YEAR- July-Sept. 2025

सदर्न्भ ग्रन्थ सूची

1. गोपाल, कृष्ण (2019). राष्ट्र का राजनीतिक प्रबोधन और एकात्म मानव दर्शन, पंडित दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और व्यक्तित्व खण्ड–1, प्रयागराज : सम्पादक–डॉ0 जितेंद्र कुमार संजय और डॉ0 इन्द्र कुमार ठाकुर, साहित्य भण्डार
2. पाण्डेय, ओमप्रकाश (2019). पंडित दीनदयाल उपाध्याय का अर्थ लोकतंत्र, पंडित दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और व्यक्तित्व खण्ड–1, प्रयागराज : सम्पादक–डॉ0 जितेंद्र कुमार संजय और डॉ0 इन्द्र कुमार ठाकुर, साहित्य भण्डार
3. अग्रवाल, रविंद्र (2019). कृषि और पंडित दीनदयाल उपाध्याय. पंडित दीनदयाल उपाध्याय व्यक्ति और व्यक्तित्व खण्ड–1, प्रयागराज : सम्पादक–डॉ0 जितेंद्र कुमार संजय और डॉ0 इन्द्र कुमार ठाकुर, साहित्य भण्डार
4. सिंह, अजीत प्रताप (2019). पंडित दीनदयाल उपाध्याय का कृषक पथ. नई दिल्ली : यश पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूशन
5. निशंक, रमेश पोखरियाल (2019). प्रखर राष्ट्रभक्त एकात्म मानववाद के प्रणेता पंडित दीनदयाल उपाध्याय. नई दिल्ली : डायमण्ड पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड

*****